Impact of British rule on Indian Economy

औपनिवेशिक शासन के भारतीय अर्थव्यवस्था पर पड़े प्रभावों की व्याख्या हेतु मुख्यत: दो तरह की प्रवृत्तियां रही हैं। यूरोपीय विद्वानों ने उपनिवेशवाद का सामान्य सर्वेक्षण किया तथा उसे पूंजीवाद की विश्वव्यापी संरचना से जोड़कर देखा। भारतीय अर्थव्यवस्था पर हुए दुष्परिणाम उनके लिए पूंजीवादी रूपांतरण की कीमत थे। भारतीय राष्ट्रवादी चिंतन का ध्यान सदा से भारतीय सन्दर्भ में औपनिवेशिक शासन को समझने की रही है। विऔद्योगिकीकरण तथा धन-निष्कासन को अंग्रेजी राज के दुष्परिणाम के रूप में उन्होंने व्याख्यायित किया।

ब्रिटिश शासन ने भारतीय अर्थव्यवस्था का "औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था" के रूप में रूपांतरण किया तथा अर्थव्यवस्था के स्वरूप एवं ढांचे का निर्धारण ब्रिटिश अर्थव्यवस्था की जरूरतों के अनुसार किया। पूर्व औपनिवेशिक परम्परागत स्वनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पूरी तरह छिन्न-भिन्न कर दिया गया। पूर्व के आक्रांताओं के विपरीत ब्रिटिश हमेशा भारत में विदेशी बने रहे तथा उनकी नीतियां भारतीय समृद्धि के दोहन की रहीं।

औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था की प्रथम स्पष्ट अभिव्यक्ति दस्तकारों एवं शिल्पकारों की बर्बादी के रूप में आई। मुक्त व्यापार प्रतिद्वंद्विता में वे टिक नहीं सके। यह प्रक्रिया विऔद्योगीकरण कहलाया। हस्तशिल्प उद्योग की क्षतिग्रस्तता की भरपाई आधुनिक उद्योग-धंधों की स्थापना कर नहीं की गई। इस विऔद्योगीकरण का सीधा परिणाम था - कृषि पर निर्भरता का बढ़ना। प्रारम्भिक आंकड़े अनुपलब्ध हैं परन्तु 1901-41 के दौरान कृषि पर निर्भर जनसंख्या 63.7% से बढ़कर 70% हो गया। भारत औद्योगिक ब्रिटेन का कृषि उपनिवेश हो गया। सदियों से सूती वस्त्रों का निर्यातक रहा भारत ब्रिटिश सूती उत्पादनों का आयातक हो गया।

ब्रिटिश भूराजस्व एवं कृषि संबंधी नीतियों से किसानों की दरिद्रता बढ़ी। क्लाइव एवं हेस्टिंग्स की अधिकतम भूराजस्व उगाही की आरम्भिक अस्थायी नीति के बाद कार्नवालिस की स्थायी बंदोबस्त व्यवस्था में किसानों को जमींदारों की दया पर निर्भर बना दिया गया। रैयतवारी एवं महालवाड़ी क्षेत्रों में सरकार ने स्वयं जमींदार का काम किया। भूराजस्व नहीं देने पर जमीन नीलाम हो जाती थी। इससे बचने हेतु कृषक को महाजनों से

ऊँचे दरों पर ऋण लेना पड़ा। ऋण जाल में पड़ जाने के बाद कृषक का उबरे निकलना मुश्किल था। ऋण की न अदायगी महाजन को भूमि हस्तांतरण का कारण बन जाती। 19 वीं सदी के अंत तक महाजन ग्रामीण क्षेत्र का मुख्य अभिशाप तथा कृषक-दारिद्र्य का एक महत्वपूर्ण कारण बन गया।

भू-राजस्व की नई व्यवस्था ने शुरुआती वर्षों में जमींदारों पर भी कहर बरपाया। लगान वसूली संबंधी सख्त कानूनों के जमींदारी छिन जाती। 1815 तक बंगाल की लगभग आधी जमींदारी पुराने भू-स्वामियों से निकलकर नवीन महाजन-सौदागर वर्ग के पास चली गई। परम्परागत जमींदारों का हटना कृषि एवं रैय्यतों दोनों के लिए नुकसानदेह साबित हुआ। जमींदारों की स्थिति में जल्द ही सुधार हुआ जब 1812 में रैय्यतों पर उनके अधिकार बढ़ा दिये गये। जमींदारी व्यवस्था के पुनर्स्थापन से इसका प्रसार हुआ तथा रैय्यत एवं जमींदारों के बीच कई बिचौलियों का उदय हुआ जिसका परिणाम रैय्यतों के शोषण के रूप में सामने आया।

अंग्रेजों के इन नीतियों के प्रभाव स्वरूप भारतीय कृषि गतिहीन होने लगी तथा इसमें गिरावट आने लगा। 1901-39 ई. के दौरान कृषि उत्पादन में 14% की गिरावट आई। भूमि पर दबाव ने भूमि विखंडन को बढ़ावा दिया। कृषि सुधार हेतु कृषकों की स्थिति न थी तथा जमींदारों ने उत्पादक-निवेश करने की अपेक्षा रैय्यतों के शोषण को श्रेयस्कर समझा। अंग्रेजी सरकार को कृषि सुधार की अपेक्षा रेलवे का विस्तार फायदेमंद दिखा। ऐसे में जब सारे संसार में कृषि का आधुनिकीकरण हो रहा था, भारतीय कृषि परम्परागत बनी रही।

औद्योगीकरण को लगभग एक शताब्दी तक हतोत्साहित करते रहने के बाद 19वीं सदी के द्वितीयार्द्ध में भारत में सीमित औद्योगीकरण प्रारम्भ हुआ। ब्रिटिश औद्योगिक क्रांति के पश्चात संचित पूँजी के निवेश हेतु यह जरूरी प्रतीत होने लगा। भारत में परिस्थितियाँ भी अनुकूल थीं यथा श्रम सस्ता था, कच्चे माल की प्रचुर उपलब्धता थी तथा सबसे बढ़कर यहाँ एक पूर्व तैयार बाजार उपलब्ध था। विदेशी पूँजी ने अनेक उद्योगों में भारतीय पूँजी को दबा दिया सिर्फ सूती वस्त्र उद्योग में आरम्भ में भारतीयों का बहुत बड़ा हिस्सा था। बीसवीं सदी के चौथे दशक में

चीनी उद्योग का विकास भारतीयों ने किया। पूंजी बाजार समस्त विदेशी नियंत्रण में था। इस दिशा में भारतीयों का प्रवेश धीरे-2 तथा बहुत बाद में हुआ। 1914 में भारत की कुल बैंक जमा के 70% पर विदेशी बैंकों का अधिकार था जो 1937 तक 57% ही आ सका। भारी या पूंजीगत उद्योगों की स्थापना में विदेशी पूंजी नहीं लगी क्योंकि इससे ब्रिटेन का भारतीय बाजार चौपट होता। भारत में प्रथम इस्पात कारखाना भारतीय उद्यम से 1913 में जाकर खुल सका। औद्योगिकीकरण की सीमितता इस बात से प्रकट होता है कि 1951 में 35.7 करोड़ की कुल जनसंख्या में केवल 23 लाख लोग आधुनिक उद्योग में लगे थे। इसप्रकार भारत में आधुनिक उद्योगों का विकास सरकारी सहायता के बिना हुआ तथा शैशवकाल में उन्हें संरक्षण भी नहीं मिला। राष्ट्रीय आंदोलन के जोरदार मांगों के बावजूद 'साम्राज्यी वरीयता' को ध्यान में रखा गया। उद्योगों के विकास से क्षेत्रीय असंतुलन का तत्व जुड़ा था, जिसने राष्ट्रीय एकीकरण में बाधा खड़ी की।

ब्रिटिश आर्थिक नीतियों का सीधा परिणाम भारतीय जनता की घोर गरीबी एवं दरिद्रता के रूप में सामने आया। अंग्रेजों के आर्थिक शोषण की नीतियों, देशी उद्योगों का पतन एवं उनकी जगह लेने में आधुनिक उद्योग की विफलता, करों की ऊंची दरें, धन का प्रवाह, पिछड़ी कृषि एवं कृषकों का जमींदार-महाजन-राजा-व्यापारी-सरकार द्वारा सम्मिलित शोषण- इन सबने मिलकर भारतीय जनता को अत्यंत दरिद्र बना दिया। दरिद्रता की अभिव्यक्ति बारम्बार पड़ने वाले अकालों की श्रृंखला में हुई। 'विलियम डिग्बी' का अनुमान है कि 1854-1901 के दौरान अकाल से 2.88 करोड़ लोग मृत्यु को प्राप्त हुए। 1943 के बंगाल अकाल के समय करीब 30 लाख लोग मारे गये। राष्ट्रीय आय संबंधी अनुमान है कि 1925-34 के दौरान संसार में सर्वाधिक कम आय भारत एवं चीन की थी। यह गरीबी न तो पूर्व औपनिवेशिक विरासत थी न भारत में प्राकृतिक संसाधनों की अनुपलब्धता की उपज और न ही भारतीयों की किसी प्रकार की अक्षमता के कारण। यह औपनिवेशिक शोषण का नतीजा थी।

संक्षेप में, औपनिवेशिक शासन के दौरान शोषण ने भारतीय अर्थव्यवस्था को एक पिछड़ी, गतिहीन अर्थव्यवस्था

Scanned with CamScanner

में बदल दिया। विभाजनोपरांत यह विच्छेदित भी हो गयी। यदि यह सब पूँजीवादी रूपांतरण की कीमत था तो भारत को यह महँगा पड़ा। स्वतंत्र भारत को अल्प विकसित एवं पिछड़ी अर्थव्यवस्था विरासत में मिली जिसके कारण आज भी हम अर्थव्यवस्था के पुनर्स्थापन एवं पुनर्निर्माण की समस्याओं में उलझे पड़े हैं।

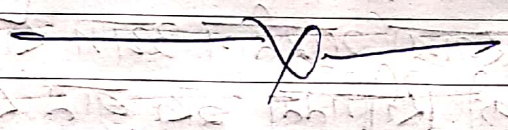

Scanned with CamScanner